तारतम मंजरी

वर्ष ४ अंक ६ जून २०१६ बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान २. नियमित स्वाध्याय ३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ ५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार ७. दृढ़ संकल्प ८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com Youtube: SPJIN Website: www. spjin.org
Twitter : @Raajan Swami Whats App: +917533876060

अनुक्रमणिका

1	सम्पादकीय – मेरे सभी दुखों का कारण ममता	आचार्य सुभाष	1
2	माया क्या है?	कृष्ण कुमार कालड़ा	3
3	खोज का महत्व	चम्पा भुजेल/बोकजान	6
4	रंगमहल और ब्रह्मलीला	.....	8
5	धर्म, धार्मिक्ता, धर्मान्धता और अध्यात्म	रुपक निजानंदी/सुरुंगा	11
6	निजधाम पाने के लिए हम सन्दरसाथ का प्रयास	बिनोद प्रसाद तिम्सिना	14
7	सत्य की ओर ...	प्रीतम सुन्दरसाथजी	16
8	आसिक इन चरन की	रामेश्वर	18
9	मनुष्य जीवन का लक्ष्य	नीयती	19
10	जोर कर तुम जागो जीव जी	जै किशन निजानन्दी	23
11	यूरिक एसिड का उपचार	आचार्य सुभाष	26

ज्ञानपीठ सुविचार

युगल स्वरूप की छवि को अपनी आत्मा के
धाम हृदय में बसाये बिना
आत्म जागृति का लक्ष्य अधूरा है

सदस्यता शुल्क

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 110 रू.	.....
आजीवन 1000 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के
व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक,
प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

मेरे सभी दुखों का कारण ममता

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! सुख नाम है समीपता का और दुख नाम वियोग का है। आज के लेख में इसी सुख और दुःख के बारे में चर्चा करेंगे। यदि जगत् गतिवाला है तो उसके साथ हमारा व्यवहार कैसा होना चाहिए? इस प्रश्न का उत्तर तो साधारण मनुष्य भी दे सकता है, अर्थात् गतिवाले पदार्थ के साथ आप स्थायी व्यवहार कर ही नहीं सकते। जो वस्तु स्वयं अनित्य हो उसके साथ हमारा सम्बन्ध भी अनित्य ही होगा। अनित्य वस्तु के साथ नित्य सम्बन्ध कैसा?इसलिए ईशोपनिषद् में कहा गया है की –

'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः' (ईशोपनिषद् – १)

अर्थात् उस (परमात्मा) के दिये हुए से भोग करे। उपनिषदों ने प्रत्येक प्रकार के भोग की आज्ञा दी है। मनुष्य विवाह करके सन्तान उत्पन्न करे, शक्ति प्राप्त करके राज्य प्राप्त करे और उसका उपभोग करे, कृषि–व्यापार तथा अन्य कौशलादि से धन प्राप्त करके उसका इस्तेमाल करे इत्यादि। उपनिषद् इन सब को विहित बतलाती है, परन्तु एक शर्त इन सब के भोग के साथ लगाती है और वह यह है कि मनुष्य इन प्राप्त भोग पदार्थों को परमात्मा का समझकर भोग करे। ऐसे विश्वास से मनुष्य प्रत्येक पदार्थ, राज्य, धनादि को परमात्मा का समझकर उनमें केवल अपना प्रयोगाधिकार समझेगा और ममत्व न जोड़ सकेगा कि 'अमुक पदार्थ मेरा है' क्योंकि संसार के समस्त दुःखों का मूल ममता है। दुःख प्रायः किसी न किसी वस्तु के पृथक् होने से हुआ करते हैं, परन्तु जब इन्हीं वस्तुओं को स्वयं छोड़ देता है, तब दुःख नहीं अपितु सुख हुआ करता है। इसे एक उदहारण से समझे –

एक प्रोफेसर को कॉलेज में अनेक वस्तुएँ जेसे पुस्तकें, चित्र, कुर्सी, मेज आदि–प्रयोग के लिए मिली हुई हैं। वह उनका कॉलेज के घण्टों में प्रयोग करता है। प्रयोग–काल (कॉलेज के घण्टों) के भीतर यदि कोई उससे इन वस्तुओं को लेना चाहता है तो नहीं देता, परन्तु जब कॉलिज को अन्तिम घण्टा बजा और इन वस्तुओं के प्रयोग का समय खत्म हुआ, तब स्वयं इन वस्तुओं को कॉलेज में ही छोड़कर अकेला शरीर लेकर चल देता है। उस समय यदि कोई कहता है कि उन वस्तुओं में से वह किसी को अपने साथ लेता जाय तो वह उसे अपने ऊपर बोझ समझता है।

प्रोफेसर ने जब इन वस्तुओं के सम्बन्ध में अपना केवल प्रयोगाधिकार समझा, तब उसे इन वस्तुओं के छोड़ने में कुछ भी दुःख नहीं हुआ, परन्तु यदि वह इन वस्तुओं में ममता जोड़ लेता है कि 'वस्तुएँ मेरी हैं' तब उसे इन वस्तुओं को छोड़ने में

कष्ट अनुभव करना पड़ता है। अस्तु, मनुष्य में जब तक ममता का प्राबल्य रहता है, तब तक वह किसी वस्तु को छोड़ना नहीं चाहता। परन्तु जब उन वस्तुओं में वह अपना केवल प्रयोगाधिकार समझता है, तब प्रयोग–समय समाप्त होने पर स्वयं उन्हें छोड़ दिया करता है।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी ! जो मनुष्य सांसारिक भोग्य पदार्थों में अपना प्रयोगाधिकार समझता है वह इन्हें प्रयोग का समय (जीवन–काल=आयु) समाप्त होने पर छोड़ देता है। उस समय उसको दुःख नहीं, अपितु सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है। अतः सारांश ये है की किसी भी पदार्थ से ममता या ममत्व न जोड़े क्योकि संसार के सभी दुखो का कारण ये ममता ही है। जो पदार्थ या वस्तु आपको मिल रही है वो केवल प्रयोगार्थ दी गयी है उसे ईश्वर का समझकर ही प्रयोग करे तो कभी दुःख नहीं होगा।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! आईये आज परमात्मा से प्रार्थना करके इस दुःख के कारण ममता(ममत्व) से सदा सदा के लिए सभी सम्बन्ध समाप्त कर देवे ताकि हम इस दुःख–रूपी तम(अंधकार) से निकल कर ज्योति के मार्ग पर अग्रसर होवे।

इसीलिए श्री प्राणनाथ जी की वाणी कहती है–तुम आईया सब आईया, दुःख गया सब दूर।।

परमात्मा का स्वरूप हृदय में बसने से संसारिक दुःख– पिडा स्वतः ही भाग जाता है। उसके लियें लौकिक सुख नगण्य है।उसे केवल परमात्मा ही चाहिए अन्य कुछ नहीं।

आचार्य सुभाष

आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tertammanjari@gmail-com

+9193141 93262(जूनेजा बाबूजी)
+919725389547(आचार्य सुभाष जी)

श्री अशोक राज जी के प्रवचन के सम्पादित अंश

माया क्या है?

प्रलेखन
कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

श्री कुल्जुम स्वरूप वाणी के प्रथम ग्रन्थ 'रास' का प्रथम प्रकरण मोहजल अर्थात् माया से ही सम्बन्धित है। इसकी प्रथम चौपाई में कहा गया है,

हवे पहेलां मोहजलनी कहुं बात, ते तां दुखरुपी दिन रात।
दावानल वले कै भांत, तेने केटली कहुं विख्यात।।

यहां मोहजल का तात्पर्य किसी तरल पदार्थ से नहीं है बल्कि माया से है जिसे भवसागर, मोहसागर, संसार सागर आदि अलग–अलग नामों से जाना जाता है। अध्यात्म के क्षेत्र मुख्यतः तीन विषय – ब्रह्म, आत्मा और माया – ऐसे हैं जिनके सम्बन्ध में सर्वाधिक चर्चा के साथ–साथ भ्रम भी व्याप्त है। निजानन्द दर्शन में जीव और आत्मा दोनों को अलग–अलग रूप में वर्णित किया गया है।

जब माया की चर्चा होती है तो इसे विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया जाता है तथा एकमत से कहा जाता है कि यह दुखःदायी है और इसे त्याग देना चाहिये। यदि हम उक्त प्रकरण के निम्नलिखित चौथी चौपाई,

ए माया छे अति बलवंती, उपनी छे मूल धणी थकी।
मुनिजनने मनाव्या हार, सिव ब्रह्मादिक नव लहे पार।।

पर दृष्टि डालें तो विदित होगा कि माया अत्यन्त शक्तिशाली है तथा यह मूलस्वरूप श्री राजजी के आदेश से ही उत्पन्न हुई है। ऐसी स्थिती में इसे बुरा कैसे कहा जा सकता है? हाँ, यह एक प्रकार से धामधनी के हृदय–रूपी पर्दे पर नकारात्मक या खलनायक की भूमिका में अवश्य है। चूंकि यह उत्तरदायित्व भी इसे श्री राज जी ने ही सौंपा है, अतः इसे बुरा तो कदापि नहीं कहा जा सकता। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम इसे देखने का अपना दृष्टिकोण बदलेंगे। दूसरे शब्दों में, हम इसे केवल नाटक के रूप में एक दृष्टा बनकर देखें न कि इसमें लिप्त होकर।

जैसा कि हमने पूर्व में भी कहा कि माया का विषय अत्यन्त भ्रामक है और सामान्यतः समस्त विद्वतजन हमें माया को छोड़ने की सलाह भी देते हैं। ऐसे में प्रश्न यह उठता है कि आखिर माया क्या है? सामान्यतः माया का अर्थ घर–परिवार, धन–सम्पत्ति तथा पद–प्रतिष्ठा से लिया जाता है। इन तीनों का मोह ही माया है तथा इन्हें ही त्यागने

के लिये हमें कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, माया या मोह के तीन प्रकार हैं – लोकेषणा, दारेषणा तथा वित्तेषणा – जिन्हें हमें छोड़ने के लिये प्रेरित किया जाता है। लेकिन वास्तविकता यह है कि माया को पहचानना इतना सरल नहीं है और यदि ऐसा होता तो हर कोई स्वयं को इससे मुक्त कर लेता।

यद्यपि वाणी में स्पष्ट रूप से कह दिया गया है कि ''सत असत पटंतरो जैसे दिन और रात'' परन्तु फिर भी माया और ब्रह्म दोनों को अलग–अलग करना सरल नहीं है। अतः यह कहना कि यह माया है और यह नहीं है, बहुत कठिन है। हाँ, ज्ञान के प्रकाश में इसे अवश्य पूर्णतः पहचाना जा सकता है। हमारे पास ब्रह्मवाणी के रूप में ज्ञान का श्रेष्ठतम स्रोत है परन्तु यदि हमने स्वयं ही अपनी आंखों पर पट्टी बांध ली तो इसमें दोष किसका है?

माया की आधी–अधूरी पहचान कर यदि हमने घर–परिवार त्याग कर साधु–महात्मा बन कर हजारों शिष्यों का समूह बना लिया तो इसे क्या माया का त्यागना कहा जा सकता है? इसी प्रकार, पचास हजार की नौकरी छोड़कर फकीर बन गये और अब करोड़ो–अरबों रुपयों का दान और चढ़ावे का उपभोग कर रहे हैं अथवा एक छोटा–सा सांसारिक पद छोड़कर 108 जगद्गुरू बन गये तो इसे क्या माया को छोड़ना कहा जा सकता है?

वाणी कहती है, ''एक आग ज्यों छोटी बुझाई, त्यों दूजी मोटी लगाई।'' इसे माया से निवृति नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः परिवार, पैसा तथा प्रतिष्ठा माया के वास्तविक रूप नहीं है। क्या छत्रसाल जी को केवल इसलिये मायावी कहना उचित होगा क्योंकि वे एक राजा के पद पर आसीन थे? रही बात धन–दौलत की तो राजा राम और झांझन भाई का उदाहरण हमारे सामने है। उनके पास इतना धन था कि मेड़ता से पन्ना तक 5000 सुन्दरसाथ की सम्पूर्ण सेवा का उत्तरदायित्व उन्होंने वर्षों तक निभाया। तो क्या वे मायावी थी?जहां तक परिवार या गृहस्थ का प्रश्न है तो क्या श्री मिहिर राज इससे अलग थे?

कहने का तात्पर्य यह है कि यदि कोई धनी व्यक्ति अपनी सम्पत्ति का त्यागपूर्वक उपभोग करता है अर्थात् उसका एक समुचित भाग दान–पुण्य तथा निर्धन व जरूरतमंद लोगों के कल्याण में व्यय करता है तो उसे कदापि मायावी नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार, यदि आपके परिवार के सदस्य आपको धर्म से विमुख नहीं कर रहे हैं अर्थात् आपको धार्मिक कार्यों में पूर्ण रूप से सहयोग करते हैं तो यह परिवार आपके लिये माया का बंधन नहीं है। इसी प्रकार, यदि आप किसी उच्च पद पर हैं और उसके धर्म तथा मर्यादा का पालन कर रहे हैं तथा उसकी गरिमा बनाये रखते हैं अर्थात् आप बिना किसी लोभ–लालच के समाज की सच्ची सेवा करते हैं तो यह भी माया नहीं है।

वास्तव में, माया कहीं बाहर नहीं है। जिस प्रकार परमात्मा के लिये कहा जाता है कि वह हमारे अन्दर ही है, उसी प्रकार माया को कहीं बाहर ढूंढने की आवश्यकता नहीं है। जितना हम इससे भागेंगे, उतना ही यह पीछा करेगी। अतः हमें इसे सही रूप में समझने की आवश्यकता है ताकि हम इससे मुक्त हो सकें। उक्त प्रकरण में आगे चलकर चौपाई 9 में महामति जी कहते हैं,

एहना आउध अमृत रूप रस, छल बल वल अकल।
अगिन कुटिल ने कोमल, चंचल चतुर चपल।।

अर्थात् माया के हथियार क्या हैं – शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध, जो जीव को अमृत के समान प्रिय हैं। इसका छल–रूपी बल इतना टेढ़ा होता है कि वह जीव की बुद्धि को भ्रमित कर देता है। यह माया कुटिल हृदय वाली उस वेश्या के समान है, जो अपने कोमल अंगों और चंचल नेत्रों के चतुराई भरे चपल हाव–भावों से पुरुष (जीव) को अपने मोहजाल में फंसा लेती है और उसके अन्दर इन पांचों विषयों के सुखों की तृष्णा रूपी अग्नि उत्पन्न कर अपने बंधन में, इस प्रकार बांधे रखती है कि जीव उसके समक्ष असहाय हो जाता है।

कहने का तात्पर्य है कि संसार की प्रत्येक वस्तु त्रिगुणात्मक पांच तत्वों से बनी होती है। इसीलिये संसार के समस्त सुखों को पांच भागों, यथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध में बांटा गया है और इन्हें ही माया के हथियारों की संज्ञा भी दी गई है। इनके निरन्तर भोग की इच्छा ही जीव के जन्म–मरण के चक्र में फंसे रहने का मूल कारण है।

विषयों का सुख क्षणिक होता है और अशान्ति को उत्पन्न करता है। यही कारण है कि माया की उपमा चंचल नेत्रों से की गई है। इसी प्रकार, विषयों के भोग के विवेकहीन आकर्षण को 'चपल' शब्द से सम्बोद्धित किया गया है। सुखों के भोग की यह अग्नि कभी शान्त नहीं होती और अविद्या/अज्ञान के कारण उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है।

अब प्रश्न यह भी उठता है कि आखिर इस माया से कैसे लड़ा जाय? इसका उत्तर इसी प्रकरण की चौपाई 41 में दिया गया है,

हवे मायानो जे पामसे पार, तारतम करसे तेह विचार।
ब्रह्माण्ड मांहे तारतम सार, एणे टाल्यों सहुनो अंधकार।।

अर्थात् केवल तारतम वाणी से ही माया से पार पाया जा सकता है। आवश्यकता केवल तारतम वाणी को मथने की है जिससे कि माया को सही अर्थों तथा रूप में जाना–पहचाना जा सके। इसके साथ ही हमें यह भी समझना होगा कि माया से लड़ने के लिये प्रेम ही अमोध हथियार है। अटूट विश्वास, समर्पण, श्रद्धा आदि भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनसे ही होकर प्रेम की चरम अवस्था तक पहुंचा जा सकता है। इसी प्रकरण की चौपाई 17 में स्पष्ट कहा गया है,

ज्यारे धणी धणवट करे, त्यारे वल वेरी न हरे।
वली गया काम सराड़े चढ़े, मन चितव्या कारज सरे।।

अर्थात् जब प्रियतम श्री राज जी हम पर अपनी प्रेम भरी कृपा करते हैं तो हमारी शत्रुस्वरूपा माया की सारी शक्तियां नष्ट हो जाती हैं जिसके परिणामस्वरूप हमारे बिगड़े हुए काम ठीक हो जाते हैं और जिस कार्य के पूर्ण होने की हमारे मन में धारणा होती है वह अवश्य ही पूरी हो जाती है।

प्रणाम जी।

खोज का महत्व

चम्पा भुजेल • बोकजान, आसाम

प्राणाधार सुन्दरसाथजी! मानव जीवन पाना ही खोज है, मनुस्य का जीव न जाने ८४ लाख योनियों में कितने कश्ट सह कर मनुश्य जीवन पाता है। क्योंकि मनुश्य तन ऐसा साधन है, जिसके द्वारा परब्रह्म को खोज कर उनकी पहचान कर अखंड मुक्ति पाई जा सकती है। भले आज मनुश्य ने अनेक भौतिक सुख साधनों की खोज कर ली है, जिससे वे क्षणिक सुख अवश्य पाता है, किन्तु आत्मिक सुख कदापि नहीं और वही क्षणिक सुख एक दिन उसके विनाश का कारण बन जाता है, और वह आत्मिक सुख से वंचित रह जाता है.

तू कौन आई इत क्यों कर, कहाँ है तेरा वतन। नार तू कौन खसम की, ढ़ कर कहो वचन।। क. ही. १६

जिन लोगों के मन में इन प्रश्नो की खोज नहीं है अर्थात् जानने की जिज्ञासा नहीं है, उसका मनुश्य जीवन पशु के सामान है। जिन लोगों के मन में इन प्रश्नों को जानने की जिज्ञासा है, उन्हें सर्व प्रथम सतगुरु की खोज करनी चाहिए, क्योंकि सतगुरु ही इन मूल प्रश्नों का समाधान करके सारे संशयो को समाप्त कर सकते हैं, और उन्हीं के द्वारा परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है।

इसलिए तो श्री मुख वाणी में कहा है कि–

खोज बड़ी संसार रे तुम खोजो साधो, खोज बड़ी संसार ।
खोजत खोजत सतगुरु पाइए, सतगुरु संग करतार।। कि.

सुन्दरसाथजी खोज का महत्व इस संसार में अपरम्पार है। जो जितने गहरे सागर में डुबकी लगाएगा उतना ही कीमती मोती पायेगा। धनी श्री देवचन्द्र जी जब ११ वर्ष के थें तब उनके मन में प्रियतम परब्रह्म को पाने हेतु जिज्ञासा उत्पन्न हुई और ४० वर्ष की उम्र तक विभिन्न मत–पंथो में खोज करके मूल प्रश्नों का समाधान पाया और तारतम्य वाणी रूपी कुंजी प्राप्त करके सारे धर्म ग्रन्थ के भेद खोल दिए।

महामति जी के द्वारा अपने प्राण–प्रियतम परब्रह्म को सारे संसार में जाहिर किये। सुन्दरसाथ जी आज हम अपने आपको इन प्रश्नों के ज्ञाता

समझते हैं और खोज के महत्व को दूरकिनार कर दिए हैं। खोज करना उन सुन्दरसाथ के लिए नहीं रहा, जिन्होंने साक्षात राज जी महाराज का दर्शन कर लिया हो और ब्रह्मज्ञान में खो गए हों। किन्तु जो सुन्दरसाथ इस स्थिति तक पहुंचे हैं, उनके जीवन में भी खोज का महत्व कभी भी समाप्त नहीं ही होना चाहिए, क्योंकि खोज से मुँह मोड़ना सुन्दरसाथ का लक्षण नहीं है। जब तक क्षर अक्षर से भी परे अखंड परमधाम की प्राप्ति नहीं होती, तब तक अपने प्रियतम की खोज में कभी भी नहीं थकना चाहिए। हमेशा खोज करके आत्मोत्थान के लिए प्रेम भक्ति की सीड़ी पर कदम बढ़ाते रहना चाहिए। श्री मुखवाणी में कहा है कि–

खोज सोहागिन न थके, जोलो पार के पारे पार। नित खोजे चरनी चढ़े, नए नए करे विचार।। क. हि.

सुन्दरसाथजी हमें अपनी खोज तब तक जारी रखनी चाहिए, जब तक अपने प्राणबल्लभ का अखंड वतन न मिल जाये। अपने अखंड घर को पाए बिना हमारी आत्मा को कभी भी शांति नही मिलेगी। इसलिए हमारे जीवन में निरंतर खोज होनी चाहिए।

जैसे मुखवाणी में कहा है–

सोहागिन तोलो खोजेही, जोलो पाइए न पीऊ वतन। पीऊ वतन पाए बिना, विरहा न जाये निसदिन।।

सुन्दरसाथजी हमें किसी जंगल या पहाड़ की गुफाओ में जाकर आत्मिक सुख की खोज नहीं करनी है। हमारे पास तो अखंड सुखो का सागर श्री कुलजम स्वरुप और वीतक साहब है। जिसमें डुबकी लगाने भर की देरी है। अगर हम अपने मन को स्थिर करके ब्रह्मज्ञान की खोज में लगेंगे, तो अवश्य ही हम ब्रह्मानंद को पा लेंगे और हमारे मन में कोई भी सांसारिक सुख की चाह नहीं रह जाएगी।

प्रणामजी

अंगना भाव

अंगना भाव कब आता है – इसका भी विशेष कारण है। सामान्यतः पुरूष अहम् प्रधान होता है तथा वह समर्पण की भाषा नहीं जानता। इसके विपरीत स्त्री में समर्पण की भावना होती है और समर्पण माधुर्य भाव से ही सम्भव है। इसलिये धर्म शास्त्रों में कहा गया है कि परमात्मा की प्राप्ति के लिये हमें उस भाव में भावित होना पड़ेगा, जब स्वयं का कोई अस्तित्व न रहे। यहां स्त्री–पुरुष से कोई लेना–देना नहीं है। कबीर जी उस अवस्था में पहुंच गये थे जहां स्त्री और पुरुष का भेद समाप्त हो जाता है। हमारा शरीर स्त्री का है या पुरुष का परन्तु जो माधुर्य भाव है वहीं अंगना भाव है।

प्रस्तुति : नैन्सी

रंगमहल और ब्रह्मलीला

ब्रह्मवाणी में अगर सबसे ज्यादा चौपाइयाँ किसी ग्रन्थ में है तो परिक्रमा ग्रन्थ में २४८१ चौपाई है, जिसमें समग्र अष्ट प्रहर और परमधाम के पच्चीस पक्षो की लीला का वर्णन है। समग्र परमधाम को ब्रह्मवाणी से चर्चनी से, बड़ी वृत से अच्छे से समझा जा सकता है, परमधाम के हर एक पक्ष और लीला के वर्णन का इस जागनी लीला से कोई न कोई संबंध है। रंगमहल की हर एक भोम की अलग अलग विशेषता है जैसे पहली भोम में रसोई की हवेली, दूसरी भोम मे भुलभुलवनी, तीसरी में पडसाल इसी प्रकार नौ भोम दसमी आकाशी की शोभा हमें इस जागनी लीला में बताई गई है।

हर बार रंगमहल की शोभा को समझते हुए दिल मे यह सवाल होता था कि क्यों पहली भोम में रसोई की हवेली की विशेष शोभा बताई गई है?क्यों दूसरी भोम में भुलभुलवनी बताई गई है? क्या इन इशारों का ,इन शोभा का जागनी लीला से या अक्षरातीत पिया श्री प्राणनाथ जी की इस ब्रह्मलीला से कोई संबंध है? जब ब्रह्मलीला और रंगमहल की हर एक भोम की उन विशेष शोभा की कड़ियाँ आपस मे जोड़ी गई, तो इश्क के उस रस से रूबरू होने का मौका मिला जो धनी हमे इस जागनी लीला में मुंह पकड़ कर जबरन पिला रहे है।

रंगमहल की पहली भोम की मुख्य शोभा रसोई की हवेली और मुलमिलावा है। अब इस शोभा को ब्रह्मलीला के पहले दिन व्रज से जोड़े तो, मुलमिलावे में इश्क रब्द के बाद धनी के हुक्म से हम सबसे पहले व्रज में आए और व्रज लीला में घर का सारा काम काज करते हुए भी हमारा दिल हमारा ध्यान धनी में ही लगा रहता था। प्रथम भोम की यह रसोई की हवेली व्रज लीला का परिरूप है।

रंगमहल की दूसरी भोम की मुख्य शोभा भुलभुलवनी और खडोकली है। जो दूसरे दिन की रास लीला का परिरूप है। रास की अंतर्ध्यान की लीला में जैसे धनी को जगह जगह हम ढूंढते थे वह भुलभुलवनी में धनी को पकड़ने की लीला की याद दिलाता है। अंतर्ध्यान लीला के पश्चात् में एक एक रूह और एक एक धनी के स्वरूप की लीला, भुलभुलवनी में चारो ओर के शीशे में जहाँ देखो वहाँ धनी दिखाई देने की लीला दर्शाती है। खडोकली और उसकी पाल की लीला योगमाया में महारास के बाद यमुना में झीलना की लीला की याद दिलाती है।

रंगमहल की तीसरी भोम की मुख्य शोभा पडसाल है, तो तीसरा दिन मुहम्मद स. अ. व. के रूप में अक्षरब्रह्म की आतम का है। इसी तीजी भोम

की पडसाल में जब धनी आते है तो अक्षरब्रह्म रोज दिदार के लिए आते है। यही पडसाल में जब उन्होंने रूहों को और रूहो ने उन्हें देखा तब दोनों ने लीला देंखने की चाहत की। पहली भोम में व्रज लीला, दूसरी भोम में रास लीला और तीसरी भोम में अक्षरब्रह्म का दीदार और ब्रह्मलीला में भी तीसरा दिन उनके रूप में।

रंगमहल की चौथी भोम की विशेष शोभा निरत की हवेली है और यहाँ ब्रह्मलीला में चौथा दिन श्यामाजी का है। निरत की हवेली में जैसे नवरंगबाई अपनी अदाओं से धनी को रिझाने की लीला करती है, वही लीला इस चौथे दिन में श्यामाजी की धनी को पाने की कसनी के रूप में है। धनी को पाने की उन्हें रिझाने की जो लीला चौथे दिन के रूप में है वही लीला निरत की हवेली में धनी को रिझाने के रूप में है। निरत में जैसे नवरंगबाई सबसे पहले स्वर छेड़ती है वैसे ही चौथे दिन में सबसे पहले श्यामाजी जागृत होती है और स्वर के रूप में तारतम का प्रकाश अपने स्वर से ब्रह्मांड में उजागर करती है और निरत के जैसे ही सभी रूहे फिर बाद में जागनी के स्वर में सम्मिलित होती है। निरत की हवेली में तीन तरफ लाल, सफेद, और पीले रंग की दीवारें है, चौथी तरफ पूर्व में दहलान आई है। क्या यह इस ओर इशारा नहीं है कि चौथे दिन में वृज, रास और धाम की सुध तो थी पर चौथी जागनी की सुध नहीं थी?

रंगमहल की पांचवी भोम की मुख्य शोभा रंगपरवाली मन्दिर है, जहाँ धनी और रूहे एकरूप हो जाते है ,जो मारफत की लीला को दर्शाता है। तो यहां पांचवे दिन में मारफत के परमसत्य रूप तारतम के तारतम रूप पांचो ग्रन्थों का अवतरण हो जाता है और पांचवी भोम में होने वाली मारफत की लीला की राह इस जागनी ब्रह्मांड में भी रूहों के लिए सुलभ हो जाती है।

रंगमहल की छठी भोम की मुख्य शोभा सुखपाल है, जिसमे बैठकर दूर दूर तक हम सखिया परमधाम के सभी पच्चीस पक्षो की सैर करती है, तो यहाँ छठे दिन में भी सम्पूर्ण ब्रह्मवाणी अवतरित हो जाने के बाद सभी रूहो के लिए परमधाम के पच्चीस पक्षो में सैर करने की राह और लक्ष्य आसान हो गया, छठी भोम में सुखपाल है तो उस सुखपाल के रूप में छठे दिन में इस जागनी लीला में ब्रह्मवाणी है कि जिसके जरिये परमधाम के सभी पक्षो की शोभा यहां बैठे बैठे देखी जा सकती है।

रंगमहल की सातवीं भोम की मुख्य शोभा दो ताली के हिंडोले है। यह दो ताली के हिंडोले इस ओर इशारा कर रहे है कि सातवे दिन में दो मुख्य कार्य होने है–रूहों का मूल तनों में जागना है और इस ब्रह्मलीला का अखंड होना हैं।

रंगमहल की आठवीं भोम की मुख्य शोभा चार ताली के हिंडोले है। दिखने में जो यह चार हिंडोले नजर आ रहे है वह श्यामाजी, रूहें, अक्षरब्रह्म और महालक्ष्मी का परिरूप है। आठवी भोम के ये हिंडोले यह दर्शा रहे है कि इन हिंडोलो की तरह ही ये चारों भी इस खेल के आनंद को लेकर झूमते हुए उठेंगे।

रंगमहल की नौमी भोम की मुख्य शोभा दुरदर्शिका है, जिसमें धनी हमे परमधाम की दूर दूर की शोभा दिखाते थे। इस नौमी भोम की लीला के

परिरूप हम धनी के दिल के जिन रहस्यों से दूर थे, अंजान थे वह धनी ने हमे दिखा दिए है और अब उस नौमी भोम की लीला के जैसे परमधाम के इस छौर से उस छौर तक के सभी रहस्य हमारे सामने है..जो नौमी भोम की लीला को सार्थक करते है।

रंगमहल की दसवीं भोम की मुख्य शोभा आकाशी और चांदनी है, जहाँ धामधनी और रूहें परमधाम की सर्वत्र शोभा का आनंद लेते है । जैसे घुमटियाँ ,पताकाएं, कंगूरे, कांगरी सभी शोभा रंगमहल को और सुशोभित कर देती है, ऐसे ही धनी के हर एक अंग की शोभा से रूबरू हो चुकी रूह, रंगमहल की सभी भोमो की मुख्य शोभा और ब्रह्मलीला का रसास्वादन करके जब उठती है तो ऐसे लगता है मानो सम्पूर्ण परमधाम दिल में समा गया हो और उस चांदनी से जैसे परमधाम की शोभा से नजर हटाने को दिल नहीं करता, वेसे ही रूह धनी के हर एक अंग में आठो सागरो के सुख को निहारती है।

अगर हम इस जागनी लीला में सही रास्ते पर आगे बढ़ना है तो हम सिर्फ ब्रह्मवाणी, सिर्फ बीतक के सहारे आगे नहीं बढ़ सकते। हमे कोई भी लीला हो या कोई भी प्रसंग हो उसे ब्रह्मवाणी, बीतक, परमधाम की अष्ट प्रहर की लीला, चर्चनी, चितवनि से जोड़कर कर ही देखना पड़ेगा और इन सभी के सहारे आगे बढ़ना पड़ेगा। यहां इस वर्णन में रंगमहल की सभी भोमो की शोभा और ब्रह्मलीला को ही जोड़ा गया है और इससे आसानी से उन मुख्य शोभाओ को भी हम सरल तरीके से समझ सकते है। चितवनि और चर्चनी को आज ब्रह्मलीला से जोड़ने की जरूरत है, जिससे हमारे समाज को वह कठिन न लगे और सही ढंग से समझ मे आ सके। सातो घाट का रहस्य भी ऐसे ही है, परमधाम के सभी पक्ष हमे कहीं न कहीं ब्रह्मलीला से जोड़ रहे है और मोड़कर धनी के दिल की ओर ले जा रहे है। बस जरूरी है कि उसे उचित तरीके से समझा जाए। रंगमहल ब्रह्मलीला को रंगीन कर रहा है और हम उसकी गिनती में उलझे हुए है। यह शोभा हमे क्यो वाणी में दिखाई गई? बस उस को यह जो ब्रह्मलीला चल रही है उससे जोड़ दीजिये काम आसान हो जाएगा। मैं तो यही करता हूं और जो सुकून जो आनंद मिलता है वह अवर्णनीय है। आप भी अगर चाहे तो ऐसा करे।

।। प्रेम प्रणाम जी ।।

महामति

श्री इन्द्रावती जी की शोभा का नाम ही 'महामति' है। महामति अर्थात् ऐसा स्वरूप जिसके द्वारा परमधाम का बेसक इलम प्रकट हुआ हे। इस स्वरूप में परब्रह्म की निज बुद्ध तथा अक्षर ब्रह्म की जाग्रत बुद्ध के साथ श्री राज जी की चिद्धन शक्ति आवेश स्वरूप विराजमान हुई। इसके अतिरिक्त परब्रह्म के सत अंग (अक्षर) तथा आनन्द अंग (श्यामा जी) की शक्ति भी विराजमान हुई। 'प्रकाश हिन्दुस्तानी' (प्रकट वाणी) का कथन ''ए पांचों मिल भई महामति'' यही संकेत करता है। इसलिये इस स्वरूप के समान महिमावान न कोई हुआ है और न कोई भविष्य में होगा।

प्रस्तुति : नैन्सी

धर्म, धार्मिक्ता, धर्मान्धता और अध्यात्म

रुपक निजानंदी • सुरुंगा, झापा नेपाल

एक अल्पज्ञ के लिए उपरोक्त विषयों पर एक भी शब्द कहना या लिखना मुश्किल ही नहीं, अपितु असम्भव सा है। फिर भी धामधनी जी कि मेहेर और सद्गुरु महाराज की प्रेरणा की छत्रछाया में दो चार शब्द लिखने का प्रयास कर रहा हूँ।

सच्चिदानन्द पारब्रह्म श्री राजश्यामाजी के प्रति अटुट निष्ठा रखनेवाले आत्मीय जनों! सर्वप्रथम धामधनी और आप सबके चरणकमलों में प्रेम प्रणाम है, प्रणाम जी।

सर्ववीदित तथ्य है कि आज विश्व दो धाराओं में विभाजित है।

आस्तिक– वे जो यह मानते और विश्वास करते हैं कि अश्य परमात्मिय शक्ति का अस्तित्व है जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का रचनाकार,संचालक और बिनाशक है, उस रचनाकार और उसकी रचना के अन्दर जो नियम है,वही धर्म है।

परमसत्य का जब तक यथार्थ मन्थन और बोध नहीं होता, तब तक संसार में मत मतान्तर पनपते रहते हैं, संशय पैदा होते रहते हैं और नौबत यहाँ तक पहुँच जाती है कि अध्यात्म एक काल्पनिक और भ्रम का विषय बन जाती है और यहीं से नास्तिकता सर उठाने लगती है।

अब जो मेरा शीर्षक है, उसके उपर संक्षिप्त चर्चा करता हूँ।

धर्म– किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बद्ध होना, विशेष प्रकार के नियम भेष–भूषा और कर्मकाण्ड का अनुसरण करना आदि प्रक्रिया आज लोग धर्म मानते हैं। भिन्न–भिन्न मत पन्थों के अलग अलग कर्मकाण्ड होते हैं और सभी का दावा यह होता है कि हम और हमारा मत ही श्रेश्ठ है और बाकी सब बेकार। आज इसी कारण धर्म के नाम पर खुनी जंग हो रही है।

वास्तव में शास्त्रोंक्त वचनों को देखा जाय तो धर्म के दस लक्षण होते हैं। इन दस लक्षणों को जीवन में चरितार्थ करना ही धार्मिक्ता है चाहे वह हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईश्साई, जैन, बुद्ध आदि में से कोई क्यों न हों?यह दस लक्षण निम्नानुसार हैं–

धृति क्षमा दमो अस्तेयं शौचं इन्द्रिय निग्रह।
धी र्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम।

मनुस्मृति

अर्थात्– धृति याने की धैर्य। सूर्य को देखें वह उदय और अस्त दोनों अवस्थाओं में लाल दिखाई देता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम तब भी उसी मुद्रा में थे जब उनका राज्यभिषेक होने जा रहा था और १४ वर्ष के लिए वनवास को निकलते वक्त भी वही मुद्रा थी। इसका अभिप्राय यह है कि सुख–दुःख, लाभ–हानि आदि द्वंदों (दोनों स्थितियों) में जो सम्यक दृष्टि बनाए रखता है, वही धैर्यवान है और धैर्यवान वही होता है जिसे यह विश्वास होता है कि फुलों में विद्यमान सुगन्ध की तरह परमात्मा हर समय मुझ में ही एक रस हैं।

क्षमा– जो यह देखने में समर्थ होता है कि दूसरे में भी वही चेतन तत्व है जो मुझ में है, वही क्षमावान होता है और यह दिव्य गुण (धार्मिक्ता) है।

दमन– मन चंचल होता है। शुभ–अशुभ कर्म यही हम से करवाता है। अगर हम इस पर धार्मिक विवेक का अंकुश लगाते हैं, तो यही मन अब हमें शुभ दिशा की तरफ ले चलने लगता है। दमन का अर्थ यह नहीं कि बिना ज्ञान के मन को जबरन दबाया जाय। इसके लिए विवेकपूर्ण सिखापन (समन) ही असली दमन है।

अस्तेय– चोरी न करना। चोरी का अर्थ होता है किसी चीज को बिना उसके मालिक की इजाजत या जानकारी के ले जाना। मन, वचन और कर्म से ऐसे कर्म से बचना ही अस्तेय है।

शौचं– शुद्धता या पवित्रता। यद्यपि हम यह सोचते हैं कि बाह्य अंगो को पानी से धोना ही शुद्धता है। पानी से धोने पर केवल अंगों की सफाई ही होती है ना कि मन की। वैकारिक भावों से अन्तःकरन को मुक्त करके उस में इश्वर भक्ति का भाव भरना या परमात्म की नूरी शोभा को बसाना ही वास्तविक पवित्रता है। तभी तो वाणी में धाम धनी ने लिखवाया भी है –

पाक न होइए इन पानीएं, चाहिए अर्श का जल।
नहाइए हक के जमाल में, तब होइए निर्मल।।

इन्द्रिय निग्रह– इन्द्रिय हमेशा बाह्य सुख को ही ललचा रही होती है। अगर हम इसके पीछे लगते हैं तो हम भी बाहर ही उलझते रहेंगे, जबकी वास्तविक सुख तो अन्दर है।

बुद्धि– बुद्धि परमात्मा का दिया उपहार है, जिसे प्रयोग करके मानव स्वयं को दुश्कर्म करने से और दुष्कर्मों की दण्ड से बच सकता है।

विद्या– शिक्षा ज्ञान। विद्या दो प्रकार की होती हैं– स्वाप्निक और जागृत। जागृत विद्या को परा विद्या भी कहा जाता है। विद्या सिढ़ी की तरह है जिसे तय करके मंजिल को पाया जाता है।

सत्य– सत्य। सत्य वो है जो अनादि से अस्तित्व में था और अनन्त तक अस्तित्व में रहेगा। ब्रह्म सत्य है। ब्रह्मज्ञान के मन्थन से ब्रह्म तत्व की पहचान जरुरी है, तभी हम अपने अविनाशी स्वरुप (आत्मा) की पहचान कर सकते हैं।

अक्रोध– क्रोध विवेक नाशक जहर है, इसलिए क्रोध न करना धार्मिक लक्षण है।

इन दस लक्षणों को आत्मसात करना ही धार्मिक्ता है। इन दस लक्षणों के अभाव में कोई भी धार्मिक नहीं कहला सकते चाहे वह किसी भी मजहब से क्यों न हो?

धर्मान्धता– धर्म के नाम पर भ्रान्तियों का शिकार होना और दूसरों को भी भ्रान्तियों का शिकार होने में मजबुर करना, प्रति के जड़ पदार्थों को परमात्मा का स्वरुप मानना, निरर्थक कर्मकाण्ड और परम्पराओं को मानना, जबरन धर्मान्तरण की कोशिशें करना आदि धर्मान्धता हैं।

अध्यात्म– पंचभूतात्मक यह शरीर है। इसके अन्दर चेतन शक्ति है।जब चेतना को यह ज्ञात हो जाय कि मैं अलग हूँ, शरीर से अलग वजूद है मेरा, मैं परमात्मा का अंश हूँ, फिर जब ध्यान और समाधि के द्वारा उसे अपने नूरी स्वरुप का साक्षात्कार अर्थात् आत्मसाक्षात्कार होकर आत्मिक आनन्द में सराबोर हो जाता है, यही वो अवस्था है जिसे अध्यात्मिक्ता कहा जाता है। इस अवस्था को प्राप्त हुए आत्म को भौतिक अस्तित्व की अस्मिता भी नहीं रहती। यही अध्यात्म का परम लक्ष्य भी है और इस मानव जीवन का भी।

आज इसी तथ्य की जानकारी से वंचित रहने से ही संसार में साम्प्रदायिक संघर्ष है। धाम धनी की पा से जिस दिन संसार को अध्यात्म का सही अर्थ मिलेगा, उस दिन से न तेरा रहेगा न मेरा, अपितु स्वरुप की पहचान होने पर सब एकरस हो जाएंगे।

मेहर

आठों सागर अक्षरातीत श्री राज जी के दिल से प्रकट हुए हैं। लेकिन आठवां सागर प्रियतम परब्रह्म की मेहर अर्थात् प्रेममयी कृपा का सागर है जिसमें सातों सागरों की विशेषताएं छिपी हुई हैं। हमें श्री राज जी की मेहर को सांसारिक कृपा नहीं समझना चाहिये बल्कि श्री राज जी की हम अंगनाओं को प्रेम द्वारा रिझाने की जो प्रवृत्ति है, उसे 'मेहर' कहते हैं। अतः हमें उस अवस्था को पाने का प्रयास करना चाहिये कि हमारे हृदय में मेहर सागर का रस प्रवाहित हो।

दूसरे शब्दों में, श्री राज जी की मेहर का अर्थ सांसारिक धन–दौलत, पद–प्रतिष्ठा या पारिवारिक सुख की प्राप्ति नहीं है बल्कि वे हमारे दिल में इतना बस जाएं कि उनके दिल की कोई बात हमसे अछूती न रहे, इसे 'मेहर' कहते हैं।

प्रस्तुति : नैन्सी

निजधाम पाने के लिए हम सुन्दरसाथ का प्रयास

बिनोद प्रसाद तिम्सिना, काठमाण्डौ, नेपाल

हम सुन्दरसाथों का निजधाम श्री परमधाम से इस असत जड़ दुःख के ब्रह्माण्ड में आयी हुई ब्रह्मआत्माओं का सुरता ने अपना निजघर, निजधाम और श्री राज जी को ही भूल गये। श्री मूल मिलावा व खिलवत खाना में इस ब्रह्माण्ड के लिए रवाना होने से पहले श्री राज जी ने जो चेतावनी हम ब्रह्मांगनाओं को दिया था आखिर वही हुआ। यहां आकर हम लोग खुद को भुल कर, यहां के असत् जड़ दुःख के दलदल को आत्मसात कर लिया है। हमारे लिए आग, पानी, पत्थर को पूजना और जानवर की तरह भोजन, मैथुन, भौतिक सुख ही सर्वोपरि हो गया है। हम कुछ नभूलने का वचन श्री राज जी को देकर आए थें, वो वचन ही भूल गए। साबित हो चुका है कि ब्रह्मांगनाओं का श्री राज जी के प्रति प्यार उतना सच्चा नहीं निकला, जिसका हमने खिलवत खाना में दावा किया था। हमारा दावा फीका पड़ चुका है।

श्री राज जी अपने वचन के पक्के निकले, क्योंकि हम ब्रह्मंगनाओं को इस दुनिया में आने के बाद, अपने निजधाम के याद दिलाकर वापस ले आने के लिए श्री प्राणनाथ जी प्रणित श्री मुखवाणी के द्धारा श्री परमधामकी सम्पूर्ण जानकारी भिजवा दीया। जिसको आज हम हरेक के घर में पधारकर अष्टप्रहर की सेवा करने का प्रयास कर रहे हैं। फिर भी इस मिथ्या संसार के पीछे भागने की हमारी खामिया दूर नहीं हुयी है। क्योंकि अब, श्री मुखवाणी का नित्य सेवा करने के बाद भी, श्री धाम का सन्देश हमें आकर्षित नहीं कर पाया है। अब भी हम झूठे है।

श्री प्राणनाथ जी अपने श्री मुखवाणी में कहते है–

स्वास स्वास निजनाम जपो बृथा स्वास मत खोय । नाजानो यह स्वासको आवन होय न होय ।।

श्री मुख वाणी का सन्देश जानने के बाबजुद भी हमारी आदत निजनाम जपने की नहीं है, बल्कि कुछ और जपते रहते है। जिसका सम्बन्ध निजनाम व श्री परमधाम से कतई नहीं मिल सकता है। हम तो मन्दिर, आश्रम, पीठ के कार्यक्रम में जमा होते हैं, सजसवरकर वाणी गायन, वाणी का सन्देश ज्यादा से ज्यादा सुनने के लिए। लेकिन वहां हम जब एक दूसरे से जुड़ते हैं तो मिलकर किसी दूसरे व तीसरे का बुराई करना शुरु कर देते हैं। वास्तव में हम इस दुनिया में झूठा खेल देखने के लिए ही आए हैं, एक दर्शक के रुपमें। जैसे टिकट काटकर सिनेमा हाल में फिल्म व कोई ड्रामा देखने के लिए जाते है। लेकिन, यहां तो कुछ और ही हो रहा है, खेल देखने वाला खुद खेल खेलने लग गए। अपने स्वार्थ के लिए, हममें से बहुत सच को झूठ और झूठ को सच

कहने में भी हिचकते नहीं है। अपने मन्दिर व आश्रम के सेवा समिति व ट्रस्ट के पदाधिकारी चुनने के वक्त और काम करने के वक्त अपनें और अपनों को आगे लाने के लिए सच को झूठ और झूठ को सच भी कहने में जरा भी झिझकते नहीं हैं। जब कि, श्री प्राणनाथ जी अपने श्री मुखवाणी में कहते है।

सत्यव्रत धारण सूं पालिए, जिहाँ लगे कमी देह ।
अनेक विधन पड़े जो माथे, तो हे न मूकिए सनेह ।।

किरन्तन १२६/२६

दुनियां का विशिष्ट सम्प्रदाय के अनुशासन को धारण करने वाले हम, अगर छोटे–मोटे स्वार्थ में सत्य का साथ छोड दें तो क्या शेष रह जाएगा? सत्य का पालन करना हमारे विशिष्ट अनुशासन के अन्तर्गत ही आता है। सत्य का पालन एक बहुत कठिन कार्य है और कोई छोटे–मोटे लोगों से इसकी अपेक्षा कभी घातक भी बन सकती है। किसी को स्वार्थ जकड़ लेता है, तो किसी को महत्वाकांक्षा जकड़ लेती है, तो किसी को घमण्ड जकड़ लेता है। परिणाम सत्य का पालन नहीं हो पाता है। जहाँ सत्य नहीं है, वहा धर्म नहीं है। क्योंकि, सत्य तो धर्म का आसन है।

जब तक हम श्री मुखवाणी के सन्देश को ठीक से नहीं समझ लेगें तब तक श्री निजानन्द सम्प्रदाय के लायक नहीं हो पाएगें। क्योंकि, श्री मुखवाणी हमें श्री अक्षरातीत धाम धनी का अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति के लिए उत्प्रेरित करती है। लेकिन जब तक, हम आग, पानी, और पत्थर और लौकिक तुच्छ लाभ के पिछे भागना नहीं छोडेंगे क्षर, अक्षर, अक्षरतीत के भेद नहीं समझ पाएगें तब तक श्री राज जी का अनन्य भक्ति करने लायक नहीं रहेगें। अब भी, हममें से बहुत साथी मिथ्या नश्वर ब्रह्माण्ड के देवताओं का प्रतिमा पूजना नहीं छोड़े है। कहीं तो सिहांसन के बगल में उनकी प्रतिमा सजाकर रखी हुई मिलती है। श्री प्राणनाथ जी अपने श्री मुखवाणी में कहतें है,

जिन सुध सेवा की नहीं, ना कछु समझे बात ।
सो काहे को गिनावे आप साथ में, जिन सुध ना सुपन साख्यात ।।

किरन्तन ६३/१

श्री मुखवाणी का आगमन का करीब ४०० साल में भी, हम मे सें बहुतों ने श्री अक्षरातीत धाम धनी का अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति के बारे में नहीं समझा है। बहुत साधारण साधक तो नहीं समझे है, सेवा समिति के जिम्मेवार पद में रहने वाले का भी वही हाल है। इसकी वजह क्या हो सकती है? मैं उसी के खोज में रहा हूँ। दुनिया का विशिष्ट श्री निजानन्द सम्प्रदाय का साधक होने का उद्देश्य है, अपने निजघर में जागृत होना। लेकिन साधारण साधना से निजघर पहुँच पाना सम्भव नहीं है। इसके लिए कठिन साधना सहित अथक प्रयास अपरिहार्य है। श्री मुखवाणी का सन्देश जाने और पालन करे बगैर हम सुन्दरसाथ साबित नही हो सकते है, तो निजघर पाना तो बहुत दूर की बात है।

इसलिए, आइए श्री मुखवाणी का नियमित अध्ययन और समझ करके अपने आपको धाम–धनी और निजघर को जाने और अन्त में खुद को परमधाम चितवनी के द्वारा पहुँचने की आज से ही जोरदार तैयारी शुरु करें ।

सत्य की ओर ...

प्रीतम सुन्दरसाथजी, यू.एस.ए.

श्री निजानंद संयुक्त धर्म और अन्धविश्वास ..

आज सांच केहेना सो तो कांहू ना रुचे ,
तो भी कछुक प्रकासूं सत ।
सत के साथी को सत के बान चूभसी ,
दुष्ट दुखासी दुरमत।।

किरंतन वाणी : १३ / १

श्री निजानन्द संयुक्त धर्म – सत्यता, चेतनता, प्रेम, ज्ञान, अहिंसा, शान्ति, मुक्ति और आनन्द का धर्म है।

श्री निजानन्द संयुक्त धर्म में अन्धविश्वास, रुढीवादी अन्धपरम्पराओं को कोई स्थान नहीं हैं।

सभी अन्धविश्वास, रुढीवादी अन्धपरम्पराओं को पूरे विश्व से हटाना चाहता है और पूरे विश्व में ज्ञान और प्रेम की ज्योति फैलाने का कामना करता है।

आईए! प्यारे, सुन्दरसाथ जी,

श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी की अनन्त प्रकाश में सभी अन्धविश्वास, रुढ़ीवादी, अन्धपरम्पराओं को जड़ से समाप्त करने का ढ संकल्प ले।

(१) अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म परमात्मा श्री प्राणनाथ जी की दिव्य वाणी श्री कुलजम स्वरुप साहेब तारतम वाणी के उपर सोना, चादी, लोहा आदि धातुओं से बने हुए मुकुट रखना, पगडी रखना, मुरली रखना,
(२) सत् चित् आनन्दमय परब्रह्म परमात्मा श्री जी साहेब जी श्री राज श्यामा जी के मन्दिर और सिंहासन मे फोटो, मूर्ति एवं प्रतिमा आदि रखना,
(३) फोटोओं को गादी बना के गादी के ऊपर रखना,
(४) फोटो और मूर्तीयों को रुमाल ओडाना,
(५) फोटो और मूर्तियों को चन्दन पूजन आरती करते हुए भोग–प्रसाद चड़ाना,
(६) झंडे को चन्दन लगाते हुए पूजन आरती करना,
(७) श्री राज जी महाराज जी की दिव्य मन्दिर में और श्री राज जी की दिव्य तारतम वाणी के ऊपर पशु प्राणियों के पूछ, रौं और पंख से बने हुए चवर हिलाना,
(८) चाँवल के टीका लगना ,
(९) नरियल फोड़ना,
(१०) कलशों की पूजन करते हुए अभिषेक करना,
(११) भूमि पूजन करना,
(१२) सवारी साधन (गाड़ियों) को पूजन करना,
(१३) बासी खिचडी सुकाकर महा प्रसाद के रुप मे सुन्दरसाथों को देना,

(१४) १०८, १००८ बाती और दीप जलना,
(१५) पंचभौतिक शरीर और मृत शरीरों के नामों का जयकारा लगाना,
(१६) नामों के आगे १०८, १००८ 'श्री' लगाना,
(१७) फोटो, प्रतिमा, मूर्ती और इंसानों की आरती करना,
(१८) कान फूकना,
(१९) मन्त्रों को गोप्य रखना,
(२०) तारतम ज्ञान प्राप्त नहीं करने वालो को महाप्रसाद चरणामृत नहीं देना आदि। ये सभी संकुचित मानसिकता और अज्ञानता में फैला हुआ अन्धविश्वास, अन्धपरम्परायें है। ये सभी अन्धविश्वास और अन्धपरम्परायें श्री प्राणनाथ जी की वाणी, बीतक और श्री निजानन्द संयुक्त धर्म के विपरित है।

ऐसे अन्धविश्वास, अन्धपरम्पराऔं को श्री निजानन्द संयुक्त धर्म में कभी भी स्वीकार्य नहीं है।

श्री निजानन्द संयुक्त धर्म– ऐसा अन्धविश्वास, रुढ़ीवादी, अन्धपरम्पराओं को पुरे विस्व से हटाना चाहाता है और पूरे विश्व मे दिव्य ज्ञान और दिव्य प्रेम की ज्योति फैलाने की कामना करता है।

आईए! प्यारे, सुन्दरसाथ जी, श्री प्राणनाथ जी की दिव्य तारतम वाणी के अनन्त प्रकाश में इन सभी अन्धविश्वास, रुढ़ीवादी, अन्धपरम्पराओं को जड़ से समाप्त करने का ढ़ संकल्प ले।

देत परिकरमा कर्म सब छूटे, यह सुख पंचम निसदिन लूटे ।।

त्रिगुन फाँस के फंद पड़े थे, सो फंदा निरवारे ।।

तिन कबीले में रहना , पूजे पानी आग पत्थर ।
बेसहूर इन भांत के , जान बूझ जले काफर।।

सुख–दुख

हमारा यह जन्म और आने वाला जन्म यह सब कुछ हमारे अपने कर्मों का ही परिणाम है। हमें मिल रहें सुख–दुःख की मुख्य वजह हमारे कर्म है। विश्व में कोई भी व्यक्ति दुःख नहीं चाहता, फिर भी उससे ऐसे कर्म हो जाते हैं, जो दुःख का कारण बनते हैं। ऐसे अशुभ कर्म का मुख्य कारण कर्म और कर्मफल के संबध में अज्ञानता है।

सामान्यतः हम जो काम अपने हाथ–पैर से करते है, उसे ही कर्म मानते हैं लेकिन वास्तव में कर्म की व्याख्या बहुत वृहद् है। मन से अच्छा–बुरा निर्णय करना भी कर्म है। हमारे शब्द भी कर्म फल का परिणाम होते है। हम खुद न करके दूसरों से कुछ करवाएं, उसका भी हमें फल मिलेगा। दूसरों के कार्यो का समर्थन करें उससे भी हमारे कर्म बनेंगे।

जैसे– जिन कर्मों से हमें भी दुःख मिलता है, दूसरों को भी दुःख मिलता है वो अशुभ कर्म है।

अमृत, कर्मफल सिद्धान्त से साभार

आसिक इन चरन की

रामेश्वर, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

आसिक इन चरन की, आसिक की रुह चरन।
एह जुदागी क्यो सहे, रुह बिना अपने तन।। सिनगार

ब्रह्मसृश्टियां धनी के चरणों की आशिक है और धनी के चरण कमल ब्रह्मसृश्टियों के जीवन के आधार है। परमधाम की आत्मायें अपने प्रणवल्लभ अक्षरातीत से भला वियोग कैसे सहन कर सकती है कभी ब्रह्मसृश्टियां अपने प्राणवल्लभ के नूरी चरण कमल को कैसे छोड सकती, क्योकि एक ब्रह्मात्मा का चरणो से उसका अखंड नाता है।

आज हम सभी अपने को ब्रह्मसृश्टि कहते लेकिन वह केवल कहनी में है चरित्र मे नही दिखाई देता है अगर हम अपने को ब्रह्मसृश्टि कहते है तो श्री राजजी के नख से सिख तक की शोभा हमारे धाम हृदय में बसी होनी चाहिए तब जाकर सिनगार की वाणी हमारे ऊपर लागू होगी कि श्री राजजी के चरण कमल से हमारा अखंड संबन्ध है और हमारे धाम हृदय में युगल स्वरूप की नख से सिख तक की सम्पूर्ण शोभा और परमधाम के पच्चीस पक्ष की शोभा बसी होगी तब जाकर कह सकते है की हम ब्रह्मसृश्टि है।

आज हम सभी सुन्दरसाथ केवल वाणी के पाठ और मेहेर सागर का पाठ करते हैं लेकिन ध्यान चितवनी, वाणी मंथन से कोसो दूर रहते कारण यह है की आज हमारा प्रणामी समाज केवल कर्मकाण्ड के मार्ग पर चल रहा है आज कहने को हम चालीस लाख सुन्दरसाथ है लेकिन उनमें से चितवनी कितने करते है उनको ऊंगूलीयो पर गीना जा सकता है इसीकारण से हम सभी सुन्दर साथ की आत्मा जाग्रत नहीं हो पा रही क्योंकि हमारे समाज में चितवनी का विरोध किया जाता और सभी सुन्दरसाथ नहीं बल्की बड़े बड़े विद्वान और आचार्य लोगों ने किया है उनका कहना है की चितवनी करने से मार जाते है इस कारण से सभी सुन्दर साथ के मन मे भ्रान्ती फैला रखी है और वाणी के मंथन और चिन्तन और चितवनी से कोसो दूर रखा क्योंकि अगर सभी सुन्दर साथ प्रतिदिन ध्यान चितवनी करने लगेगा तो उनको कौन महत्त्व देगा इसलिए और वाणी के मंथन से दूर करने का कारण यह है। जब तक सभी सुन्दर साथ खिल्वत, परिक्रमा, सागर, सिनगार की वाणी को नहीं पढेगा तब तक श्री राजजी के प्रति उसका प्रेम कैसे बढेगा क्योंकि इस को कहते तारतम का भी तारतम क्योंकि इस के अंदर राजजी के दिल की गुह्य बाते लिखी है और सम्पूर्ण परमधाम के और राजजी श्यामा जी और सखियों की पहचान बताई गई जब तक खिल्वत, परिक्रमा, सागर, सिंनगार की वाणी को आत्मा मंथन नहीं करोंगे तब तक आत्मा जागृत नहीं हो सकती इसको हृदय मे बसाने पर ही आत्मा जग्रती हो सकती है क्योंकि अक्षरातीत श्री राजजी के चरण कमल की शोभा को अपनी आत्मा के धाम हृदय मे बसाने पर ही हमारी पूर्ण जागनी हो सकती है इसलिए आत्मा श्री राजजी के चरणों के आसिक है क्योंकि अक्षरातीत के हृदय मे लहराने वाले प्रेम का रस उनके चरणों से ही प्राप्त किया जा सकता है अन्यथा और कोई उपाए नहीं है।

मनुष्य जीवन का लक्ष्य

नीयती

प्यारे सुन्दरसाथ जी क्या हमने कभी अपने जीवन में यह विचार किया है कि ये जो मनुष्य तन मिला है इसका मुख्य लक्ष्य क्या है?यह मनुष्य तन हमें 84 लाख योनियों के बाद प्राप्त हुआ है। तो सोचिए हम इसका कोई लाभ उठा भी रहे हैं या नहीं। वाणी में लिखा है–

वृथा का निगमो रे, पामी पदारथ चार ।
उत्तम मानखो खंड भरथनो, सृश्टि कुली सिरदार ।।

सुन्दरसाथ जी सिर्फ मनुष्य तन ही नहीं बल्कि हमें तो चार अनमोल पदार्थ मिले हैं– 1) उत्तम मनुष्य तन, 2) भरतखंड, 3) 28वां कलियुग तथा 4) ब्रह्मज्ञान। पर कितने दुर्भाग्य की बात है कि यह चार अनमोल पदार्थ पाकर भी हम अपने इस जीवन को व्यर्थ में ही गवां रहे हैं। इसका मूल कारण यह है कि मनुष्य अपने मूल स्वरूप को ही भूल बैठा है। मनुष्य को सदैव गुमान रहता है कि मेरे पास बुद्धि है, इसलिए पशुओं के मुकाबले में अपने सुख आराम के सामान प्राप्त कर सकता हूँ। पर पशुओं को तो इन चीजों की आवश्यकता ही नहीं है। उनकी आवश्यकता का सामान तो प्रकृति ने उन्हें पहले से ही दे रखा है। उन्हें न मेज की आवश्यकता है न कुर्सियों की, न नरम मुलायम गद्दों की और न ही शीश महलों से उनको कोई वास्ता है। क्योंकि जो आराम मनुष्य को मुलायम गद्दों और बिस्तरों में है उन पशुओं को रेत के टीलों पर सोते हुए कुछ कम नहीं है।

मनुष्य तो कभी इस बात पर गर्व करते ही नहीं थकता कि मैं विद्या ग्रहण कर सकता हूँ, धन कमा सकता हूँ, मान सम्मान पा सकता हूँ और ये सब तो पशु नहीं कर सकते। यदि मनुष्य तन धारण करके भी हमने उस पूर्णब्रह्म परमात्मा की पहचान नहीं की तो फिर हमने जीवन में कुछ भी प्राप्त नहीं किया। फिर इससे तो पशु ही कई गुना अच्छे हैं, जो दूसरों के काम तो आते हैं। दूध पिलाते हैं, हल चलाते हैं, भार ढोते हैं, यहां तक की मरने के बाद भी उनकी हड्डियां, मांस चमड़ा भी काम आता है। गुरूवाणी में भी लिखा है–

नरू मरे नरू कामि न आवे ।
पसु मरे दस काज सवारै ।।

बंदे नालों रूख चंगेरा, जिहड़ा लग पये बिन लायों
ढींमा खाए ते फल खवाए, अते फरक न करदा छायों
चंगा खावे ते चंगा पहने, अते रब दा नाम भुलायों
आख गवाला मोया जीवंदिया, तू केहड़े कम आयों ।

हम इस संसार में अपना सारा वक्त खाने, पीने, सोने तथा धन कमाने में ही गवां रहे है और अपने जीवन का जो मुख्य लक्ष्य पूर्णब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति है उसे भूल बैठे हैं।

फरीद जी फुरमाते हैं–

फरीदा चार गवाइयां हंडि के, चार गवाईयां समि ।
लेखा रब मंगेसीया, तू आंहो के हें कम ।।

कुछ लोगों का कहना है कि संसार की सारी सुख सुविधा की वस्तुएं हमारे लिए ही तो बनी हैं, यदि हम इनका सुख नहीं भोगेंगे तो कौन भोगेगा?जिन लोगों की यह आवाज है यदि उनसे पूछा जाए कि भाई मान लिया संसार के सब पदार्थ तुम्हारे लिए हैं और तुम्हारी खातिर ही बनाए गए हैं, परन्तु तुम किस लिए बने हो?इस बात का उत्तर किसी के पास नहीं है।

सतगुरू तो कहते हैं कि तू जो अपने आपको शरीर समझ रहा है सो तू शरीर नहीं है। यह शरीर तेरा नौकर है और तू इसका मालिक। तुझे अपने स्वरूप का ज्ञान होना चाहिए। यदि नौकर को उसकी तनख्वाह से अधिक दिया जाए तो वह बिगड़ जाएगा। इसलिए इसे आवश्यकता के मुताबिक दे और साथ ही वह काम भी इससे लें जिसके लिए ये तुझे मिला है।

जो मालिक अपने नौकर को खुला खर्च देता है पर उससे काम लेने का ढंग नहीं जानता, वह सदा हानि उठाता है। फिर जिस घर में सब अधिकार नौकर के हों और नौकर भी मालिक के विरूद्ध हो तो सोचिए उस घर के मालिक का क्या हाल होगा? थोड़े ही दिनों में मालिक को कंगाल कर देगा? यही हाल जीव का हो रहा है। इस शरीर ने इसे ऐसी दशा में पहुँचा दिया है कि जीव 84 लाख योनियों में भटकता हुआ ठोकरें खाता फिरता है, क्योंकि वह इस नश्वर शरीर को ही अपना असल स्वरूप मान बैठा और जो काम इस शरीर से लेना चाहिए वो नहीं ले रहा। हमारी हालत तो उस आदमी जैसी है जिसके घर एक बार साधू आए और उसने उनकी बहुत सेवा की। साधु उसकी सेवा से बहुत प्रसन्न हुए और उसे एक सप्ताह के लिए पारसमणि दे दी और कहा लोहे को छू कर तू जितना सोना बना सकता है बना ले फिर मैं वापिस ले लूँगा। यह कहकर साधू चला गया वह मनुष्य अब हर रोज बाजार जाता, लोहे का भाव पूछकर आ जाता और सोचता जब लोहा सस्ता होगा तो खरीद लूँगा। इसी तरह दिन बीतने लगे और लोहे का भाव और बढ़ गया। ऐसा करते करते छठा और

सातवां दिन भी बीत गया। सात दिन बाद साधू अपने किए इकरार के मुताबिक आ गया। और उसे ऐसी हालत में देखकर आश्चर्य चकित हो गया। साधू के पूछने पर उस आदमी ने सारी कहानी सुना दी लोहा सस्ता ही नहीं हुआ। यह सुनकर साधु हँसा अरे नादान! तुझे मैने ऐसी चीज दी थी जिससे तू एक ही पल में मालामाल हो सकता था। तेरी नादानी की तो कोई सीमा ही नहीं है। तूने तो अनमोल समय को हाथ से खो दिया है। बता अब पछताने से क्या फायदा।

सुन्दरसाथ जी आज हमारा भी हाल उस व्यक्ति जैसा ही है। हमें भी यह जिंदगी चंद दिनों के लिए ही मिली है और यदि हमने इस सुनहरे अवसर को अपने हाथ से गवाँ दिया तो फिर बाद में पछताना पड़ेगा।

श्री मुखवाणी में लिखा गया है–

फेर पटकोगे हाथड़े, और छाती देओगे घाउ ।
चल जासी पिऊ हाथ से, फेर न पाओगे दाउ ।।

सुन्दरसाथ जी, यदि हम परमधाम के इस ब्रह्मज्ञान को पाकर भी माया के विषय विकारों में लीन रहेंगे, तो क्या मुख लेकर अपने धनी के सनमुख होंगे?सुन्दरसाथ जी गलती कबूल करने में और गुनाह छोड़ने में कभी देर नहीं करनी चाहिए। क्योंकि सफर जितना लंबा होगा वापिस उतनी ही मुश्किल हो जाएगी। हम भी अगर जीवन के सफर में माया की चाहना को लेकर ही आगे बढ़ते रहेंगे और जो अनमोल खजाना धाम धनी हमारे लिए लाए हैं उसका कोई लाभ नहीं उठाएंगे तो हमारी हालत भी उस भंगी जैसी हो जाएगी, जिस पर प्रसन्न होकर एक राजा ने कंचन का थाल जिसके भीतर व बाहर करोड़ों रूपए की कीमत के हीरे जवाहरात जड़े थे दे दिया। भंगी थाल को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और राजा को दुआएं देते हुआ अपने घर आया और वह थाल अपनी भंगन को दे दिया। भंगन उस थाल को पाकर बहुत खुश हुई। बोली आज तो बढ़िया टोकरी हाथ लगी है आगे से इसी में ही कूड़ा कर्कर उठाया करेंगे।

अब वह उस थाल को सिर पर रख मटक–मटक कर चल पड़ी और थाल से गंदगी उठाने का काम लेने लगी। एक दिन अचानक राजा की दृष्टि भंगी पर पड़ी। उसका फटा पुराना हाल देख राजा से रहा न गया। उसने भंगी से पूछा 'अरे, यह क्या हाल बना रखा है?' तुझे तो मैंने ऐसा नायाब तोहफा दिया था, जिसे तेरी सात पुस्ते भी यदि बैठकर खाती तो भी खत्म न होता। परन्तु तेरी ऐसी दशा का कारण क्या है?आगे से भंगी ने उत्तर दिया, हजूर आपका अति धन्यवाद। जब से आपने उस थाल की बख्शीश दी है तब से दुख छुट गया है। निःसंदेह वह थाल बहुत कीमती है क्योंकि न छूटता है, न फूटता है, न खराब होता है और न पुराना होता है। पहले बड़ी दिक्कत होती थी, थोड़े दिनों बाद ही नई टोकरी खरीदनी पड़ती थी, परन्तु

जब से ये थाल आपने दिया है तब से इस मुसीबत से छुटकारा मिल गया है। राजा ने ज्यों ही उस थाल को देखा, मन में अति दुःखी हुआ। राजा ने थाल उससे वापिस ले लिया और उसके बदले कुछ टके दिलाकर उसे रूखसत कर दिया।

सुन्दरसाथ जी सोचिए, हमारी और उस भंगी की दशा में अंतर ही क्या है?हम भी तो ब्रह्मवाणी रूपी अनमोल खजाना पाकर भी माया के विषय विकारों की गंदगी ही उठाने में उलझे पड़े हैं। सुन्दरसाथ जी यदि हमने अपना यह अमूल्य जीवन धनी की याद में नहीं लगाया तो हमारे इस जीवन पर धिक्कार है।

वाणी में लिखा है–

धिक धिक पड़ो मेरी सुध को मेरे तन को ।
मेरे मन को, याद न किया धनी धाम ।।

मेयराज

जब मोहम्मद साहब को मेयराज हुआ तो श्री राज जी ने उनसे कहा कि वे कल यानि फरदा रोज को आयेंगे। इस पर मोहम्मद साहब ने उनसे पूछा कि वे किस मन्दिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में आयेंगे ताकि वे उसे हीरे–मोतियों से सजा दें। इस पर धामधनी ने उत्तर दिया कि वे किसी मन्दिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में नहीं बल्कि मोमिनों (सुन्दरसाथ) के दिल में आयेंगे। इसीलिये, वाणी में कहा गया है,

अर्श तुम्हारा मेरा दिल हैं, तुम आये करो आराम।

सेज बिछाई रूच–रूच कर, एयी तुम्हारा विश्राम।।

◆◆◆◆◆◆◆

धर्म

धर्म किसी पूजा–पद्धति या कर्मकाण्ड को नहीं कहते। न ही किसी विशेष वेशभूषा को धारण करने से कोई व्यक्ति धार्मिक हो जाता है। धार्मिक व्यक्ति वही है जिसमें निम्न दस लक्षण हों – धैर्य, क्षमा, दमन करना, चोरी न करना, आन्तरिक व बाह्य पवित्रता, इन्द्रीयनिग्रह, बुद्धि, विद्या, मन, वाणी व कर्म से सत्य का आचरण करना तथा क्रोध न करना।

प्रस्तुति : नैन्सी

जोर कर तुम जागो जीव जी

जै किशन निजानन्दी, आसाम (नागालैण्ड)

सुन्दरसाथ जी! सूक्ष्म रूप से देखे तो आत्मा की जागनी, जीव की जागनी पर ही निर्भर है। जब तक जीव अपने जागनी के पथ पर अग्रसर नहीं होता तब तक आत्मा अपनी जागृत अवस्था की प्राप्ति हेतु स्वयं को असहाय महसूस करती है। क्योंकि आत्मा बेचारी तो जीव के ऊपर बैठकर ही माया का खेल देख रही होती है। जीव तारतम ज्ञान के प्रकाश में जब तक अपनी नजर परमधाम की ओर नहीं करता, तब तक आत्मा भी अपने आपको जीव के रूप में ही देखती है। जीव के क्रिया–कलाप को स्वयं की क्रिया कलाप समझती है। जीव के घर (संसार) को अपना घर समझती है। इस तरह से जीव हो या आत्मा, दोनों ही माया के फरामोशी में बेसुध रहते हैं।

परमधाम की आत्मा तो माया के फरामोशी के कारण अपनी सुद्ध–बुद्ध खो बैठी होती है। दूसरी ओर जीव भी अपने अन्तःकरण के माया जनित जंजालों में फँसकर अपने मूल लक्ष्य को भूल चुका होता है। जीव का मूल लक्ष्य क्या है?यह ऋग्वेद के इस मंत्र से स्पष्ट होता है–''राधसे जज्ञिसे'' अर्थात् हे जीव! तूं ब्रह्म प्राप्ति के लिए ही उत्पन्न हुआ है। यही है जीव का परम लक्ष्य। इस लक्ष्य की प्राप्ति जीव को तभी हो सकती है, जब वह तारतम वाणी के प्रकाश में आए।

तारतम वाणी के प्रकाश में ही जीव अपने जन्म–जन्मान्तरों के विकार रूपी संस्कारों का नाश कर सकता है और अपनी शुद्ध–बुद्ध अवस्था को प्राप्त कर सकता है। इसके लिए जीव को अंगना भाव में डूबकर अपने विकारों का शमन करना होगा। कयोंकि– ''जोलों जीव विचार विकार न काढे, ज्यों छींट ना लगे धड़े चिकटे''– इसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार तेल, घी आदि की चिकनाई घड़े पर लग जाने से उस पर किसी भी प्रकार का रंग नहीं चढ़ता, ठीक उसी प्रकार जब तक जीव विवेक पूर्वक विचारों के द्वारा अपने विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि) को दूर नहीं करता है, तब तक उस पर प्रेम का रंग नहीं चढ़ता। और जब तक प्रियतम के प्रेम का रंग नहीं चढ़ता, तब तक भला प्रियतम अक्षरातीत की प्राप्ति या दीदार कैसे हो सकता है?

जीव के हृदय में प्रियतम अक्षरातीत के प्रति प्रेम तभी उत्पन्न होगा, जब वह पूर्ण निर्मलता को

प्राप्त करे। इसके लिए जीव को विरहा रस का पान करना पड़ेगा। प्रियतम के विरह में डूबकर अपने हृदय के विकारों का नाश करना होगा। तभी जाकर जीव का हृदय पाक–साफ होकर अक्षरातीत के प्रेम का काबिल हो सकेगा। इसलिए वाणी में कहा गया है कि– ''दम दिल पाक तब होवहीं, जब हक की आवे फिराक।'' प्रियतम का विरह ही वह अग्नि है, जिसमें जीव के दिल में बसा बड़ा से बड़ा विकार भी जलकर नष्ट हो जाता है और जीव अपने निर्मल हृदय में प्रेम भरकर प्रियतम अक्षरातीत की प्राप्ति की राह में अपना कदम बढ़ाता है।

जीव को अपनी जागनी हेतु तारतम ज्ञान की आवश्यकता होती है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में ही जीव को अपना लक्ष्य दृष्टिगोचर होता है। तारतम वाणी में दी गयी जागनी हेतु सिखापन को आत्मसात् कर जीव अपनी जागनी के पथ पर आगे ही आगे बढ़ता जाता है। तारतम ज्ञान के उजाले में उसे अखण्ड सुख की लज्जत भी मिलने लग जाती है। इस प्रकार वह एक दिन अपने प्रियतम अक्षरातीत की मेहेर की छाँव तले सरलतापूर्वक जागृत अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

सुख बड़े तारतम के, क्यों जाहेर कीजे ।
वाणी मायने देख के, जीव जगाए लीजे ।।
प्र0 हि0 31/144

इसलिए जीव की जागनी तभी सम्भव है, जब वह तारतम वाणी के प्रकाश में आये। तारतम वाणी में कही हुई बात को अपने हृदय में धारण करे। क्योंकि अमृत रूपी तारतम वाणी का रस ही हृदय में पहुँच कर माया के विषय को पूर्णतया निकाल देता है। ऐसी अवस्था में अन्तःकरण तथा इन्द्रियों में प्रविष्ट हुआ सम्पूर्ण मायावी विकार रूपी विष निकल जाता है, जिससे जीव अति शीघ्र जागृत अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

एही रस तारतम का, चढ़या जेहेर उतारे ।
निरविख काया करे, जीव आगे करारे ।।
प्र0 हि0 31/142

प्रियतम अक्षरातीत के द्वारा परमधाम के ज्ञान की ऐसी अलौकिक गर्जना सुनकर भी यदि जीव अज्ञानमयी निद्रा को छोड़कर जागृत नहीं होता है, तो निश्चय ही उसके समान अभागी और अकर्मी कोई नहीं है। परन्तु यदि वह अपने प्रमाद एवं आलस्य को छोड़कर, अज्ञानमयी मोह निद्रा को त्यागकर जागृत अवस्था को प्राप्त कर लेता है और पतिव्रता साधन के द्वारा अपने प्रियतम अक्षरातीत को रिझा लेता है, तो वह जीव एक बार नहीं सात बार सुहागी कहलाने की शोभा प्राप्त कर लेता है। जिस जीव को अक्षरातीत की सुहागी (अर्धांगिनी) कहलाने की शोभा मिल जाए, उस जीव के लिए इससे बड़ी शोभा और क्या हो सकती है?

तोको कहूं अभागी अकरमी, जो जाग्या ना एते सोर ।
सात बेर तोको कहूं सोहागी, जो तूं उठे अंग मरोर ।।
प्र0 हि0 14/13

इसलिए श्री इन्द्रावती जी, जीव को सावचेत करते हुए कहती हैं कि हे जीव! अब तुम अपनी पूर्ण शक्ति लगाकर जागृत हो जाओ। यह जागनी ब्रह्माण्ड सोने के लिए नहीं है। इस संसार में तो जितना ही अधिक माया की नींद में सोया जायेगा उतना ही अधिक माया का विष चढ़ता जायेगा अर्थात् विषय सुखों में जितना ही अधिक लिप्त रहा जायेगा, जन्म–मरण का चक्र भी उतना ही शक्तिशाली होता जायेगा। माया की नींद को न छोड़ने का परिणाम यह होता है कि बाद में मनुष्य के जीव को बहुत दुःख भोगना पड़ता है।

जोर कर तुम जागो जीव जी, नहीं सूते की एह जिमी जी ।

ज्यों ज्यों सोइए त्यों त्यों बाढ़े विख विस्तार, पीछे दुख पावे जीव आदमी जी ।।प्र0 हि0 30/11

सुन्दरसाथ जी! हम सभी सुन्दरसाथ अपने आपको ब्रह्मसृष्टि मानते हैं। किन्तु यह भी सत्य है कि सभी सुन्दरसाथ जी के जीव के ऊपर आत्मा विराजमान नहीं है। दूसरी ओर यह भी सत्य है कि हम सभी सुन्दरसाथ ब्रह्मसृष्टि का दावा लेकर बैठे हैं तो हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम ब्रह्मसृष्टि की रहनी अपनाएं। हमारा मूल लक्ष्य है अपने जीव एवं आत्मा को जागृत करना। तारतम ज्ञान ग्रहण करने वाले सभी सुन्दरसाथ को धाम धनी ने सुहागिन कहलाने का अधिकार दिया है। इसके साथ ही ब्रह्मसृष्टि हो या ईश्वरी सृष्टि या जीव सृष्टि– ''सब आए करो दीदार'' अर्थात् सबको प्रियतम अक्षरातीत का दीदार का अधिकार प्राप्त है।

तारतम ज्ञान ग्रहण करने वाला कोरा जीव भी होगा और वह स्वयं को अक्षरातीत की अर्धांगिनी मानकर प्रेम लक्षणा भक्ति के द्वारा अक्षरातीत को रिझायेगा, आत्मिक भावों में डूबकर प्रेममयी चितवनी के द्वारा अपने प्रियतम के शोभा–श्रृंगार को अपने हृदय में बसायेगा, तो निःसन्देह वह अक्षरातीत के दीदार का सुख एवं परमशक्ति की प्राप्ति कर लेगा और सातवें दिन की लीला में वह ब्रह्मसृष्टि के जीव के समान ही शोभा धारण कर सत्स्वरूप की पहली बहिश्त को प्राप्त करेगा। उसका नूरी तन परात्म का प्रतिबिम्बित नूरी स्वरूप होगा। परमधाम में होने वाली दिव्य लीलाओं का प्रतिबिम्ब सत्स्वरूप के पहली बहिश्त में पड़ेगा, जिसका रसपान कर वह जीव सदैव आनन्द की मस्ती में झूमता रहेगा। जीव के जागने का यही वास्तविक फल है।

।। प्रणाम जी ।।

यूरिक एसिड का उपचार

आचार्य सुभाष
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

यूरिक एसिड यानि जोड़ों का दर्द आजकल आम सुनने को मिलता है। अक्सर 30 साल की उम्र से ज्यादा लोग इस परेशानी से जूझ रहे हैं। यह शरीर में यूरिक एसिड के टूटने से होता है, जो ब्लड सर्कुलेशन से कीडनी तक पहुंचता है और यूरिन के माध्यम से शरीर से बाहर निकल जाता है।

कई बार सेहत से जुड़ी कुछ परेशानियों के कारण यूरिक एसिड शरीर से बाहर नहीं निकल पाता, जिससे बॉडी में इसकी मात्रा ज्यादा हो जाती है। एक स्वस्थ्य महिला के शरीर में यूरिक एसिड का नॉर्मल लेवल 2.4–6.0 उहध्कस और पुरुषों में 3.47.0 उहध्कस होना जरूरी है। शरीर में इसकी मात्रा बढ़ जाने पर यह गठिया का कारण बनती है। इसके लक्षणों को पहचान कर सही समय पर इलाज करवाना बहुत जरूरी है।

यूरिक एसिड के लक्षण

1. हाथों–पैरों में एठन
2. जोड़ों में दर्द
3. उठने–बैठने में परेशानी होना
4. जोड़ो में हल्की–हल्की सुजने

खान–पान में पोषक तत्वों की कमी होने पर यूरिक एसिड बढना शुरू हो जाता है।

दवाइयों के ज्यादा सेवन से भी यह परेशानी हो सकती है।

जरूरत से ज्यादा प्रोटीन खाने से रक्त में यूरिक एसिड की मात्रा बढने लगती है। एक्सरसाइज या शारीरिक श्रम की कमी होने से भी शरीर में यूरिक एसीड बढ़ने लगता है।

यूरिक एसिड को कंट्रोल करने के घरेलू उपाय

अखरोट में बहुत से जरूरी पोषक तत्व जैसे ओमेगा–3, फैटी एसिड्स, विटामिन्स, मिनरल्स, कैल्शियम, प्रोटीन, आयरन आदि मौजूद होते हैं, जो सेहत को बेहतर बनाएं रखते है। रोज सुबह खाली पेट 2–3 अखरोट खाने से यूरिक एसिड कंट्रोल हो जाता है।

एक चम्मच शहद में अश्वगंधा पाउडर मिलाएं। फिर इसे हल्के गर्म दूध के साथ खाएं। इससे भी काफी फायदा मिलेगा लेकिन ध्यान रखें कि गर्मी में इसका कम से कम सेवन करें।

यूरिक एसिड बढने पर शरीर में गांठ की तरह जमा होने लगता है और तेजी से शरीर के बाकी अंगों में फैलने लगता है। ऐसे में 1 चम्मच

बेकिंग सोडा को 1 गिलास पानी के साथ मिलाकर पीने से शरीर में बनी गांठ खुलने लगती है और यूरिक एसिड भी कम होने लगता है।

यूरिक एसिड के मरीजों को ज्यादातर गठिए की समस्या रहती है। इसका बचाव करने के लिए सुबह खाली पेट बथुए के पत्तों का ज्यूस निकाल कर पीएं। ध्यान रखें ज्यूस पीने के 2 घंटे तक किसी और चीज का सेवन न करें।

अजवायन सेहत के लिए काफी फायदेमंद होती है, रोजाना खाने में अजवाइन का इस्तेमाल करने से यूरिक एसिड कम होता है। खाने में इस्तेमाल के अलावा, इसका पानी के साथ सेवन करें।

रोज चंकुदर और सेब का ज्यूस पीएं। इससे शरीर का पीएच स्तर बढ़ता है और यूरिक एसिड कंट्रोल में रहता है। इनके अलावा गाजर का ज्यूस भी फायदेमंद है।

अधिक से अधिक पानी का सेवन करें क्योंकि इससे शरीर में बढ़ा हुआ यूरिक एसिड पेशाब के द्वारा बाहर निकल जाता है। इसके अलावा पानी का सही मात्रा में सेवन करने से शरीर में ऊर्जा बनी रहती है।

विटामिन सी यूरिक एसीड में बहुत लाभकारी है। नींबू को डाइट में शामिल जरूर करें। इसके अलावा विटामिन सी से भरपूर फलों का सेवन जरूर करें।

शरीर में मोटापे के कारण चर्बी अधिक जमा होती है। जिससे यूरिक एसिड बढ़ की संभावना ज्यादा रहती है। इसलिए अपने वजन को कंट्रोल रखें लेकिन ध्यान रखें कि वजन कम करने के लिए एक दम डाइटिग पर न रहें बल्कि धीरे–धीरे कोशिश करें।

इन चीजों से करें परहेज

1. प्रोटीन वाले आहार से करें परहेज
2. बेकरी प्रोडक्टस का सेवन न करें
3. एल्कोहल से दूर रहें
4. डिब्बा बंद भोजन न खाएं

सेल फिश, लाल मांस, साबुत अनाज और दालें जैसे मसूर, राजमा, चना, सब्जियां और फल जिनमें हरी मटर, पालक, फ्रेंच सेम, बैंगन, फूलगोभी, मशरूम, चीकू आदि शामिल हैं। ये ऐसे खाद्य पदार्थ हैं जिनका अधिक मात्रा में सेवन करने से आपके शरीर में यूरिक एसिड की मात्रा बढ़ सकती है। इसके अलावा चीनी, कैफीन, अल्कोहल से भी दूर रहें। अपनी डाइट को सुधार कर ही आप अपनी बहुत सी बीमारी को सही कर सकते हैं। इसलिए बीमारी का इलाज डाइट की सुधार से करें।

अपने शरीर से अतिरिक्त यूरिक एसिड को निकालने करने के लिए, हर दिन 10 से 12 गिलास पानी पीएं। लाल मांस, शैल्फिश, मैकेरल, सार्डिन्स जैसे उच्च प्रोटीन आहार से बचें। चिकित्सको द्वारा यह सलाह दी जाती है कि सोयाबीन, टोफू और अन्य सोया उत्पादों के सेवन से बचें द्यजिम करने वालो को क्रिएटिन और दूसरों जैसे उच्च प्रोटीन त्रिम खाद्य पदार्थों का सेवन करने से बचना चाहिए। विटामिन सी और विटामिन ई का सेवन यूरिक एसिड के स्तर को कम करने में सहायक मानी जाती है।

चेरी, स्ट्रॉबेरी, ब्लूबेरी स्वाभाविक रूप से यूरिक एसिड को कम करने के लिए उत्ष्ट फल

माने जाते हैं। घर बैठे यूरिक एसिड कैसे सही करें जानने वालो क लिए यह उपाय काफी प्रभावी है इसमें आपको उच्च फाइबर भोजन का सेवन करना है। सेब, नाशपाती, पपीता उत्ष्ट फल हैं।पालक, सोयाबीन, मटर, शतावरी, मशरूम, पनीर और अन्य खाने से बचें। सेब का रस भी यूरिक एसिड को काम करने के लिए काफी प्रभावी है। दैनिक तोर पर सेब खाना काफी जरूरी है।

आर्टिफीसियल फलों के रस, से बचें एलोवेरा का रस और अमला का रस एसिडिक तत्व को नियंत्रण में रखने में भी मदत करता है जो रक्त में यूरिक एसिड के स्तर में वृद्धि का मुख्य कारण है। यूरिक एसिड को स्वाभाविक रूप से कम करने के लिए अग्नि तत्व असंतुलन को बहाल किया जाना चाहिए। ताजा नारियल का पानी स्वाभाविक रूप से यूरिक एसिड को कम करने का एक अच्छा तरीका भी है। आप जितना संभव हो उतना प्रातिक आहार उपभोग करने का प्रयास करें। जंक फूड खाने से बचें। शीतल पेय और फ्रीजड भोजन के सेवन से बचें तनाव भी गठिया के हमलों में वृद्धि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और रक्तचाप और मधुमेह जैसे अधिक स्वास्थ्य विकारों का कारण बनता है। इसलिए तनाव से बचें।

यूरिक एसिड का आयुर्वेदिक उपचार

यूरिक एसिड हमारे शरीर में तब बनता है जब शरीर हमारे खाने में से प्यूरीन जैसे पदार्थों को तोड़ देता है। डॉक्टर्स के अनुसार यह बताया जाता है की यूरिक एसिड आमतौर पर रक्त में मिलकर, गुर्दे से गुजरता हुआ मूत्र से निकल जाता है। हाइपर्यूरिसिया, या यूरिक एसिड का उच्च स्तर तब होता है, जब रक्त में अतिरिक्त यूरिक एसिड होता है। कई कारक उच्च यूरिक एसिड बढ़ाते हैं जैसे नाइट्रोजन युक्त कंपाउंड, या प्यूरीन का उच्च स्तर, जो उन्मूलन से अधिक तेजी से जमा हो सकते हैं, यह गुर्दे और पूर्व मौजूदा चिकित्सा स्थितियों को और बिगाड़ सकते हैं।

गिलॉय कैप्सूल, नवकरशिक पूर्ण, पुर्णव कैप्सूल जैसे आयुर्वेदिक उपचार यूरिक एसिड के स्तर को कम करने और गठिया दर्द में मदद करने के लिए उत्ष्ट प्रातिक उपचार हैं। करेले का रास और आमला रस रोजाना पीएं। खाली पेट सुबह गुडुची या गिलोय (गुडुची कैप्सूल गिलो टिनसपोरा कॉर्डिफोलिया कैप्सूल) की 1–2 पत्तियों का उपभोग करें।

नवकार्षिक चूर्ण . उच्च यूरिक एसिड के लिए

नवकार्षिक चूर्ण दुर्लभ आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों का एक प्रभावी संयोजन है, जो बिना किसी दुष्प्रभाव के प्रातिक रूप से यूरिक एसिड के स्तर को कम करने के लिए बहुत प्रभावी माना गया है।इस चूर्ण के उपयोग करने के कुछ दिनों के भीतर यूरिक एसिड के स्तर को जल्दी से कम करने में मदद करती है। इस चूर्ण को रोजाना दो बार 1 चम्मच सेवन किया जा सकता है, इसको पानी में भिगोया जाता है (2 चम्मच) और पानी का अवशेष छोड़ सुबह और शाम में खाया जा सकता है। इस्तेमाल किए गए चूर्ण में जड़ी बूटी हिमालयी पहाड़ों के प्राचीन पर्यावरण से प्राप्त की जाती हैं और बिना किसी रसायन या संरक्षक के शुद्ध शुद्ध जैविक जड़ी बूटियां होती हैं।

वतारी चूर्ण – यह सभी प्रकार के यूरिक एसिड, वात–रोग, संधिशोथ गठिया, गठिया, शरीर के जोड़ों में दर्द के इलाज के लिए एक दवा है।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा।

<u>।।धन्यवाद।।</u>

श्री बीतक साहिब चर्चा

सप्रेम आमंत्रण

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ,
नकुड़ रोड़,सरसावा में श्री बीतक साहिब चर्चा

दिनांक 22–07–2019 से 22–08–2019 तक

प्रारम्भ होने जा रही है, जिसका समय मध्याह्न 3 बजे से 5 बजे तक रहेगा।

इस बीतक चर्चा मे कुछ ऐसे अनसुलझे प्रश्नों का
समाधान भी किया जायेगा –
जैसे पूर्णब्रह्म परमात्मा कौन है?
उसका धाम–स्वरूप व लीला कैसी है?
मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ।
शरीर और संसार को छोडने के पश्चात जाना कहाँ है।
मेरी मुक्ति कैसी होगी
आदि ऐसे प्रश्नों के शंका–समाधान किये जायंगे।

अतः आप सभी धर्म जिज्ञासु महानुभावों से निवदेन है
कि प्रतिदिन समय पर पधारकर इस आध्यात्मिक
ज्ञान–चर्चा को सुनकर अपने जीवन को सार्थक करें।

धन्यवाद

निवेदक : **श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा** । फोन : 8650851010

तामतम मंजरी के पाठकों से निवेदन

प्राणाधार श्री सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आप की प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं तांकि श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी (ब्रह्मज्ञान) का सन्देश जन–जन तक पहुँच सके तथा तारतम वाणी के कल्याण कारी वचनों को पढ़कर प्रत्येक मानव सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं निजानंद विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे और आत्मिक कल्याण हेतु सच्चिदानन्द परब्रह्म के चरणों में आये।

सुन्दरसाथ जी! हम इस पत्रिका की लाभ–हानि की बात नहीं कर रहे हैं। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि आर्थिक सहयोग भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रूका रहता है, पुनरपी उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अतः ऐसे सज्जनों से निवदन है कि श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ के साहित्य बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप सुन्दरसाथ जी वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

धन्यवाद

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

प्रणाम जी
सुभाषित वचन

(१) हम सदा ज्ञानपूर्वक सत्य ही बोलें, असत्य व कटु न बोलें।
(२) हमारी वाणी प्रेम, अपनत्व व सहानुभूति से परिपूर्ण हो तथा वाणी मधुरता,विनम्रता व मृदुता से युक्त हो।
(३) हमारी वाणी में निराभिमानता और अन्यों के प्रति सम्मान और आदर का भाव हो।
(४) हम आत्मश्लाघा अर्थात् स्वयं ही अपनी प्रशंसा करने के दोष से युक्त न हो।
(५) हम परमात्मा की महत्वपूर्ण देन इस वाणी को निंदा, चुगली में व व्यर्थ बोलकर दूषित न करें।
(६) हमारी वाणी प्राणी मात्र के लिए हितकर हो, अहितकर नहीं।

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपुर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,